Sri Kali Pratyangira

श्री काली-प्रत्यंगिरा

Sumit Girdharwal
9410030994, 9540674788
sumitgirdharwal@yahoo.com
www.yogeshwaranand.org
www.baglamukhi.info

इस विद्या का तीनों संध्याओं में पाठ करने वाला साधक समस्त बाधाओं तथा शत्रुओं से सुरक्षित रहता है। किसी भी प्रकार की कोई विपत्ति उसे व्याप्त नहीं करती। 'अंगिरा' ऋषि द्वारा प्रणीत यह विद्या निश्चय ही साधक की समस्त आपदाओं का नाश करने वाली एवं सभी ग्रहों की कुदृष्टि से उसे सुरक्षित बनाने वाली है।

यह विद्या उग्र है इसलिए दीक्षित साधक ही इसका पाठ करें।

"ॐ नमः सहस्त्र सूर्येक्षणाय श्री कण्ठानादि रूपाय पुरुषाय पुरु हुताय ऐं महा सुखाय व्यापिने महेश्वराय जगत् सृष्टि कारिणे

ईशानाय सर्व व्यापिने महा घोराति घोराय ॐ ॐ ॐ प्रभावं दर्शय दर्शय।”

ॐ ॐ ॐ हिल हिल, ॐ ॐ ॐ विद्युज्जिह्वे बन्ध-बन्ध, मथ-मथ, प्रमथ-प्रमथ, विध्वंसय-विध्वंसय, ग्रस-ग्रस, पिव-पिव, नाशय-नाशय, त्रासय-त्रासय, विदारय-विदारय मम शत्रून् खाहि-खाहि, मारय-मारय, मां सपरिवारं रक्ष-रक्ष, करि कुम्भस्तनि सर्वोपद्रवेभ्यः।

ॐ महामेघौघ राशि सम्वर्तक विद्युदन्त कपर्दिनि, दिव्य कनकाम्भोरुहविकच माला धारिणि, परमेश्वरि प्रिये! छिन्धि-छिन्धि, विद्रावय-विद्रावय, देवि! पिशाच नागासुर गरुड़ किन्नर विद्याधर गन्धर्व यक्ष राक्षस लोकपालान् स्तम्भय-स्तम्भय, कीलय-कीलय, घातय-घातय, विश्वमूर्ति महातेजसे ॐ ह्रं सः मम शत्रूणांविद्यां स्तम्भय-स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां मुखं स्तम्भय-स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां हस्तौ स्तम्भय-स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां पादौ स्तम्भय-स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां गृहागत कुटुम्ब मुखानि स्तम्भय-स्तम्भय, स्थानं कीलय-कीलय, ग्रामं कीलय-कीलय, मण्डलं कीलय-कीलय, देशं कीलय-कीलय, सर्व सिद्धि महाभागे! धाारकस्य सपरिवारस्य शान्तिं कुरु-कुरु, फट् स्वाहा, ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अं अं अं अं अं हूं हूं हूं हूं हूं खं खं खं खं खं फट् स्वाहा। जय

प्रत्यंगिरे! धारकस्य सपरिवारस्य मम रक्षां कुरु-कुरु, ॐ हूं सः जय-जय स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्माणि! शिरो रक्ष-रक्ष, हूं स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कौमारि! मम वक्त्रं रक्ष-रक्ष हूं स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वैष्णवि! मम कण्ठं रक्ष-रक्ष हूं स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नारसिंहि! ममोदरं रक्ष-रक्ष हूं स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्राणि! मम नाभिं रक्ष-रक्ष हूं स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चामुण्डे! मम गुह्यं रक्ष-रक्ष हूं स्वाहा।

ॐ नमो भगवति! उच्छिष्ट चाण्डालिनि! त्रिशूल वज्रांकुश-धरे मांस भक्षिणि, खट्वांग कपाल वज्रांसि-धारिणी! दह-दह, धम-धम, सर्व दुष्टान् ग्रस-ग्रस, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा।

ॐ दंष्ट्रा-करालि, मम मंत्र-तंत्र-वृन्दादीन् विष
शस्त्राभिचारकेभ्यो रक्ष-रक्ष स्वाहा।

स्तम्भिनी मोहिनी चैव क्षोभिणी द्राविणी तथा।
जृम्भिनी त्रासिनी रौद्री तथा संहारिणीति च॥
शक्तयः क्रम योगेन शत्रु पक्षे नियोजिताः।
धारिताः साधकेन्द्रेण सर्व शत्रु-निवारिणी॥

ॐ स्तम्भिनि! स्फ्रें मम शत्रून स्तम्भय-स्तम्भय स्वाहा।

ॐ मोहिनी! स्फ्रें मम शत्रून मोहय-मोहय स्वाहा॥

ॐ क्षोभिणि! स्फ्रें मम शत्रून क्षोभय-क्षोभय स्वाहा।

ॐ द्राविणि! स्फ्रें मम शत्रून द्रावय-द्रावय स्वाहा॥

ॐ जृम्भिणि! स्फ्रें मम शत्रून जृम्भय-जृम्भय स्वाहा।

ॐ त्रासिनि! स्फ्रें मम शत्रून त्रासय-त्रासय स्वाहा॥

ॐ रौद्रि! स्फ्रें मम शत्रून सन्तापय-सन्तापय स्वाहा।

ॐ संहारिणि! स्फ्रें मम शत्रून संहारय-संहारय स्वाहा॥

Sumit Girdharwal Ji & Sri Yogeshwaranand Ji
+91-9540674788, +91-9917325788 Email : shaktisadhna@yahoo.com
www.baglamukhi.info , www.yogeshwaranand.org

Mantra Siddhi Rahasya

मन्त्र-सिद्धि-रहस्य

Sumit Girdharwal
9410030994, 9540674788
sumitgirdharwal@yahoo.com
www.yogeshwaranand.org
www.baglamukhi.info

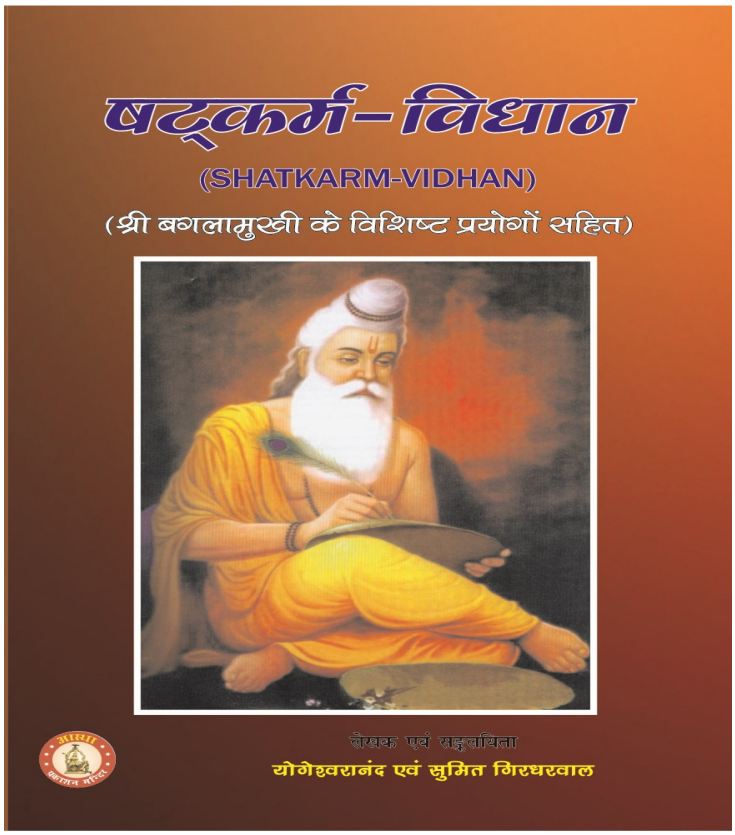

"मन्त्रे तीर्थे द्विजे देवे दैवज्ञे भैषजे गुरौ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धि-र्भवति तादृशी॥"

अर्थात् मन्त्र, तीर्थ, द्विज, देवता, ज्योतिषी, औषध और गुरु में जिसकी जैसी भावना होती है, उसे वैसी ही सिद्धि प्राप्त होती है।

जो व्यक्ति साधना करना चाहता है, उसके लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि वह, गुरु, मन्त्र और मन्त्र-देवता के प्रति पूर्ण समर्पित हो। मन्त्र, देवता और गुरु में सम्पूर्ण आस्था रखते हुए उनमें 'एक्य' भाव रखना चाहिए, तभी मन्त्र सिद्ध होता है। तभी गुरु और देवता की कृपा प्राप्त होती है। एक साधक को मन्त्र-सिद्धि के लिए धैर्य की आवश्यकता होती है। जिन लोगों में धैर्य न हो, डरपोक प्रकृति के हों, मन्त्र और गुरु के प्रति पूर्ण आस्थावान न हों, ऐसे लोगों के लिए यह क्षेत्र नहीं है। चंचल प्रवृति के लोग, जिनके चित्त और मति भ्रमित रहते हों, वे भी इस क्षेत्र में पदार्पण न करें, तो ही अच्छा है, क्योंकि ऐसे लोगों को सिद्धि-प्राप्ति होना सम्भव ही नहीं है।

साधना-उपासना में मन्त्र की प्रधानता होती है। मन्त्र दिखने में भले ही छोटा लगता हो, परन्तु उसका प्रभाव अत्यन्त ही तीव्र होता है। उनकी शक्ति परमाणु से भी अधिक विस्फोटक होती है, आवश्यकता है भाव की गहनता की। व्यक्ति/साधक का भाव जितना अधिक गहन होगा, उसका मन्त्र उतना ही अधिक प्रभावी होगा। भाव के बिना कोई सिद्धि नहीं होती। भाव-हीनता की अवस्था में साधक भले ही लाखों मन्त्रों का जप कर ले, असंख्य जप कर ले, उसे कोई लाभ प्राप्त नहीं होगा। इसके लिए बहुत ही आवश्यक यह है कि जो भी साधना, जो भी मन्त्र-जप आप कर रहे हैं, उसके प्रति पूर्ण विश्वस्त रहें और उसी भाव में लीन हो जायें। स्वयं को मन्त्रों के भाव में इतना डुबो दें कि अपनी भी सुध न रहे; अपना अस्तित्व भी विस्मृत हो जाये। साधक की ऐसी स्थिति होने पर ही उसकी विशिष्ट ऊर्जा विशिष्ट स्थान पर केन्द्रित होने लगती है। धीरे-धीरे उसमें वृद्धि होती जाती है, जिसे शरीर अपने रोमछिद्रों तथा हथेलियों के द्वारा बाहर निकालता है। आज्ञा चक्र के माध्यम से इस निष्कासित होने वाली ऊर्जा को ही नियंत्रित करके सिद्धि प्राप्त की जाती है।

हम जानते हैं कि हमारी देह ब्रह्माण्ड का ही एक सूक्ष्म रूप है जो असंख्य अणुओं के सहयोग से बना है। ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म स्वरूप होने के कारण ही हमारे शरीर में स्थित ऊर्जा केन्द्र ब्रह्माण्ड में स्थित ऊर्जा केन्द्र से सम्बद्ध है। हमारी रीढ़ में स्थित तीन ऊर्जा धाराएं एक-दूसरे से गुथी रहती हैं, जिन्हें हम इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के नाम से जानते हैं। इन्हें गंगा, यमुना और सरस्वती भी कहा जाता है। ये परस्पर जिस स्थान पर मिलती हैं, अथवा लिपटने के क्रम में काटती हैं, वहीं एक गुच्छा सा बन जाता है, जिससे उस स्थान पर अत्यन्त सूक्ष्म तरंगों का उत्पादन होने लगता है। ये ही वे स्थान हैं, जिन्हें हम 'चक्र' के नाम से जानते हैं। इन्हीं बिन्दुओं अथवा चक्रों पर ध्यान केन्द्रित करने से ऊर्जा में वृद्धि होने लगती है, और देह में एक अनोखी शक्ति का संचार होने लगता है। इसी शक्ति के कारण चमत्कार होने लगते हैं। जिस बिन्दु अथवा चक्र की ऊर्जा में वृद्धि होती है, उसी के गुण प्रबल हो उठते हैं। जब उस बिन्दु के गुण में विशिष्ट वृद्धि होने लगती है, बस वही चमत्कार को जन्म देती है। इन चक्रों का आकार शिवलिंग जैसे स्वरूप का होता है। त्रिभुजाकार स्वरूप में लिंगाकार स्वरूप का निरंतर घर्षण चलता रहता है (इंजन में पिस्टन के समान) जिससे निरंतर ऊर्जा प्रवाहित होती रहती है। एक बिन्दु से स्रावित होने वाली ऊर्जा दूसरे बिन्दु (चक्र) से स्रावित होने वाली ऊर्जा से भिन्न होती है। इनके आकार, स्वरूप, रंग, गति तथा गुणों में विशेष अंतर होता है। साधक अपने 'आज्ञा चक्र' के द्वारा (जिसके अधिष्ठाता देवता 'शिव' अथवा 'रुद्र' हैं) जिस बिन्दु अथवा चक्र पर विशेष ध्यान लगाता है, उसी बिन्दु से उत्पन्न होने वाली ऊर्जा प्रबल आवेशित हो उठती है और विभिन्न भेदों से आकार ग्रहण करती है। यही वह ऊर्जा शक्ति है, जिससे उत्पन्न होने वाली तरंगों को हमारे पूज्य महर्षि, ऋषि-मुनि, देवी-देवताओं के विभिन्न स्वरूप

मानकर उनकी उपासना करते थे। देवी-देवताओं के ये सभी स्वरूप इन ऊर्जा केन्द्रों से उत्सर्जित होने वाली तरंगों के ही परिणाम हैं।

पूजा के दो भेद हैं : 'अन्तर्याग' एवं 'बहिर्याग'। बाह्य पूजन में हम जो प्रतिमाएं अपने सामने रखते हैं, वे केवल भाव-मूर्तियां हैं। उन्हें देखने से जो भाव उत्पन्न होते हैं वे बहुत महत्वपूर्ण हैं। जिस भी देवी-देवता की हम मूर्ति-पूजा करते हैं, उसके स्वरूप को देखकर ही हमारे मन में उस भाव का जागरण होने लगता है। यदि हम काली देवी की प्रतिमा को देखते हैं, उनका पूजन करते हैं तो उनके स्वरूप के अनुसार ही हमारे मन में भाव आने लगते हैं। इसी प्रकार यदि हम हनुमान जी की प्रतिमा पर ध्यान केन्द्रित करते हैं तो वैसे ही स्वरूप व गुणों की उत्पत्ति हमारे मन में होने लगती है। भाव का सीधा प्रभाव ऊर्जा उत्पादन वाले चक्र पर पड़ता है। परिणामस्वरूप उस भाव से सम्बन्धित ऊर्जा का उत्पादन उस बिन्दु से होने लगता है। जैसे-जैसे ध्यान और भाव में वृद्धि होती है, वैसे-वैसे ही सम्बन्धित चक्र से ऊर्जा का उत्सर्जन होने लगता है और वे अपने लिए ब्रह्माण्ड (बाह्य) में उपलब्ध उपयोगी तरंगों को अपनी ओर आकर्षित करके उनका संग्रहण करने लगती है। जिसका प्रभाव यह होता है कि जिस कर्म के सम्पादन हेतु हम अपना भाव (साधना) केन्द्रित कर रहे हैं, उस कार्य का सम्पादन करने की ऊर्जा अथवा शक्ति हमारे भीतर प्रबल हो उठती है। आज्ञा चक्र उस ऊर्जा से उत्पन्न तरंगों को निर्देशित करके अभीष्ट की पूर्ति कराता है। हमारे समाज में जो हवन और अनुष्ठानों का सम्पादन किया जाता है, उनका वास्तविक प्रयोजन यही है कि जो सामग्री हवन में प्रयुक्त की जाती है, जलने के उपरान्त वह वायु में जो तरंगें उत्पन्न करती हैं, वे हमारे द्वारा सम्पादित किये जाने वाले कर्म के लिए उपयोगी होती हैं। उन तरंगों को हमारी तरंगें ग्रहण कर लेती हैं और परिणामस्वरूप हमें अभीष्ट की प्राप्ति होती है। यही कारण है कि हवन आदि में विशिष्ट काम्य कर्मों हेतु

विशिष्ट सामग्री का प्रयोग करने हेतु निर्देश दिये गये हैं। इन्हीं तरंगों से आवेशित होने के कारण होम की राख और धुएं आदि को विशेष उपयोगी समझा जाता है।

इस प्रकार हमारा 'आज्ञा-चक्र' जो दोनों भोहों के मध्य स्थित है और जिसे 'त्रिकुटि' कहा जाता है, उसका महत्व किसी भी साधना में सफलता प्राप्त करने के लिए सर्वोपरि है। यदि यह चक्र बिगड़ जाये तो व्यक्ति पागल हो जाता है। आपने सुना होगा कि 'अमुक' व्यक्ति 'अमुक' साधना करते हुए पागल अथवा विक्षिप्त हो गया। इस विक्षिप्तता का यही कारण है कि जिस साधना को हम सम्पन्न करते हैं, उसमें ऊर्जा के केन्द्र से उत्पन्न होने वाली ऊर्जा से प्रवाहित तरंगों को हम कन्ट्रोल नहीं कर पाते, उन्हें सही दिशा-निर्देश नहीं दे पाते। परिणामस्वरूप हमारा आज्ञा-चक्र बिगड़ जाता है, जो विक्षिप्तता का कारण बनता है।

'आज्ञा-चक्र' के देवता को भगवान शिव, रुद्र, विश्वदेवा, हाकिनी आदि के नाम से विभिन्न सम्प्रदाओं में जाना जाता है। इस चक्र से उत्सर्जित होने वाली तरंगें वास्तव में एक ड्राइवर के समान हैं, जो किसी भी चक्र अथवा बिन्दु से उत्पन्न होने वाली ऊर्जा की तरंगों को नियंत्रित करती है। परंतु यदि किसी वाहन का ड्राइवर ही अनियंत्रित हो जाये अथवा अपना संतुलन खो बैठे तो जरा सोचिये कि वाहन का क्या परिणाम होगा? बस यही स्थिति इस चक्र की है। इसलिए जब तक इस चक्र को परिपक्व साधित न किया जाये, तब तक ऊर्जा से उत्पन्न और मन से उत्पन्न तरंगों को हम नियंत्रित नहीं कर सकते। मन की तरंगें इतनी चंचल होती हैं कि वे एक स्थान अथवा विचार पर टिक ही नहीं सकतीं। यदि हमारा आज्ञा-चक्र एकाग्र, परिपक्व और साधित हो तो कोई भी तरंग इसके विपरीत नहीं जा सकती। शक्तिशाली तरंगों को यही वश में कर सकता है। यही कारण है कि तंत्र-साधना करने वाले लोग सर्वप्रथम

'रुद्र', 'महाकाल', 'हाकिनी', और वैदिक लोग 'विश्वदेवा' की साधना सम्पन्न करते हैं।

हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि संभवतः इस तथ्य से परिचित हो चुके थे और शायद यही कारण था कि वे अपने शिष्यों को खूब सोच-समझकर ही साधना सम्बन्धी ज्ञान प्रदान करते थे। शायद इसी से वे मूर्खों और धूर्तों को ज्ञान देना उचित नहीं समझते थे। मूर्खों को ज्ञान देने की अपेक्षा वे उस ज्ञान को साथ लेकर मर जाना उचित समझते थे।

जिस प्रकार हमारी देह इस विराट ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म पिण्ड है, उसी प्रकार इस सृष्टि के प्रत्येक कण में सूक्ष्म ब्रह्माण्ड उपस्थित है। प्रकृति के कण-कण में वह सब कुछ उपलब्ध है, जो इस ब्रह्माण्ड में उपस्थित है। जिस प्रकार ऊर्जा का संचार ब्रह्माण्ड में होता है, उसी प्रकार कण-कण में भी होता है। मन्त्र-जप के लिए अनेकों स्थानों पर यह कहा जाता है कि उक्त मन्त्र का जप 'अमुक' विशिष्ट वृक्ष के नीचे करें। इसका एकमात्र कारण यही है कि उस पेड़ से उत्सर्जित होने वाली तरंगों में वह गुण है, जिसकी आपको आवश्यकता है। पेड़ों, जड़ी-बूटियों आदि में से इसी प्रकार की तरंगें निकलती रहती हैं। इस प्रकार ये ही तरंगें प्रत्येक जीव में और प्रत्येक वनस्पति में विद्यमान हैं। ये तरंगें ही हमारे देवी-देवता हैं। सुमेरू पर्वत हमारे भीतर भी है, जो मेरू दण्ड के रूप में विद्यमान है। समस्त देवी-देवता-राक्षस भी हमारे भीतर ही विद्यमान हैं। कैलाश पर्वत भी हमारे सहस्रार का ही स्वरूप है, जहां शिव निवास करते हैं।

उपर्युक्त समस्त कथ्य को कहने का मेरा अभिप्राय एकमात्र यही है कि यह समस्त ब्रह्माण्ड आज्ञा-चक्र की तरंगों से नियंत्रित होता है। ये तरंगें ही रुद्र हैं। यह जितना अधिक प्रभावी होगा जितना अधिक परिपक्व होगा, साधना में उतनी शीघ्र ही सफलता प्राप्त होगी। इसलिए यह आवश्यक है कि सबसे पहले रुद्र अर्थात् शिव की साधना की जाये। त्रिकुटी में ध्यान लगाने का निर्देश

इसीलिए दिया जाता है। स्त्रियों का भावचक्र अधिक शक्तिशाली होता है, इसलिए उन्हें साधना में सफलता शीघ्रता से मिलती है। काली, दुर्गा, भैरव, लक्ष्मी आदि जड़त्व प्रधान देवी-देवता भी स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा शीघ्रता से सिद्धि प्रदान करते हैं, इसलिए वामाचारी साधनाओं में स्त्रियों को 'भैरवी' के रूप प्रयोग करते हुए उन्हें प्राथमिकता प्रदान की गयी है, जबकि धनात्मक देवता, जैसे– रुद्र, शिव, गणेश, हाकिनी, उमा जैसे देवी-देवता स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों के लिए शीघ्र सिद्धिदायक होते हैं। स्थूल 'चक्र-पूजन' भी ऐसी ही ऊर्जा प्राप्ति का एक मुख्य साधन है।

इन्हीं सब कारणों से त्रिकुटी में ध्यान लगाते हुए साधना करने के निर्देश दिये जाते हैं। आज्ञा-चक्र पर तिलक लगाने का भी यही कारण है। इस चक्र पर जिस पदार्थ तथा रंग का तिलक लगाया जायेगा, मानसिक शक्ति उसी भाव से प्रभावित होगी।

हमारे शास्त्र स्पष्ट करते हैं कि कलियुग में तन्त्र ही प्रभावी है, न कि वैदिक-मन्त्र। इन वैदिक विधानों की बहुत ही लम्बी और उबाऊ प्रक्रिया है। इनमें अभीष्ट-सिद्धि भी बहुत देर से प्राप्त होती है। तन्त्र के प्रभावी होने का आज विशेष कारण यह भी है कि पृथ्वी पर काली की तरंगें प्रधान हैं। दिन के समय दुर्गा की तरंगें सबल रहती हैं और रात्रि में काली की तरंगें प्रभावी रहती हैं।

वाम मार्ग में संयम की कठोरता इतनी अधिक और उबाऊ नहीं है। इस मार्ग में तकनीक, वानस्पतिक-योग, तन्त्र-सामग्री और शरीर के अंगों का महत्व है, जिन्हें साधना पड़ता है। इन योगों से जो ऊर्जा उत्पन्न होती है, उसे नियंत्रित करने का कार्य ही साधक को करना पड़ता है। इस नियंत्रण के लिए ही साधना की जाती है।

यह सब कहने का उद्देश्य एकमात्र इतना ही है कि साधना में सफलता प्राप्त करने के लिए अपने कर्म के अनुसार भाव बनाएं और उसी में डूब जायें। मानसिक शक्ति को प्रबल, दृढ़ तथा स्थिर बनाने के लिए ही साधना की जाती है। यदि कोई व्यक्ति गहन भाव में डूबकर कुछ क्षणों के लिए भी स्वयं के अस्तित्व को विस्मृत कर दे तो उसके लिए कोई भी सिद्धि दुर्लभ नहीं है।

साधना के द्वारा सिद्धि प्राप्त करने के लिए कुछ आवश्यक नियम अनुकरणीय हैं, जैसे– चित्त शुद्ध और प्रसन्न रहना चाहिए। अपना आहार और दिनचर्या नियमित रखें। अपना शरीर, आचरण, खान-पान भी शुद्ध तथा संयमित रखना चाहिए। षट्कर्मानुसार निर्देशों का अनुपालन करते हुए किसी वस्तु को लाना या ले जाना हो तो उसे विधि-विधान से ही लायें अथवा ले जायें। तन्त्र के अनुसार यदि किसी भी वृक्ष अथवा पौधे आदि का कोई अंग इन प्रयोगों के लिए लाया जाता है तो उसके लिए एक पूर्ण विधान है। इन्हें लाने से एक दिन पूर्व नियमानुसार इन्हें न्यौता देना होता है। तदोपरान्त अगले दिन उसकी पूजा आदि करने के उपरान्त ही उसे घर लेकर आते हैं और प्रयोग में लाते हैं। इसी प्रकार अनेकों ऐसे आवश्यक निर्देश वाम मार्ग में हैं, जिनका अनुकरण आवश्यक है।

भूत-शुद्धि

मन्त्र-साधना से पूर्व साधक को आवश्यक है कि वह आन्तरिक और बाह्य-शुद्धि कर ले। बाह्य-शुद्धि स्नान आदि से, आन्तरिक शुद्धि आचमन और प्राणायाम से होती है। इस साधना काल में 'भूत-शुद्धि' भी अत्यन्त आवश्यक है। भूत-शुद्धि के द्वारा हमारे पूर्व कृत दोषों का निवारण होता है। साधकों ने अनेकों अवसरों पर यह अनुभव किया होगा कि उनके द्वारा किये जाने वाले जपों का कोई प्रभाव उन्हें परिलक्षित ही नहीं होता। इसका मुख्य कारण यह है

कि हमारे आराध्य देव सर्वप्रथम हमारे दुष्कर्मों और पूर्वजन्य दोषों का निस्तारण करते हैं। इसलिए हमारा अथक और असंख्य जप इन कर्मों का निस्तारण करने में ही व्यय हो जाता है। उसके बाद जब हम सर्वथा साफ-सुथरे हो जाते हैं, तब उन मन्त्रों का प्रभाव दिखाई देना आरंभ होता है। एक आधा-अधूरा साधक इस लम्बी-प्रक्रिया और अधैर्य के कारण निराश हो जाता है। वह समझने लगता है कि मन्त्र आदि सब व्यर्थ हैं, जबकि वास्तव में ऐसा होता नहीं है। इसके लिए मैं एक उदाहरण आपको बताना चाहूंगा। इस समय मुझे उस साधक का नाम स्मरण नहीं पड़ रहा है, इसलिए सुविधा की दृष्टि से उसका नाम 'रामशरण' रख लेते हैं।

इन रामशरण जी ने भगवती काली की साधना आरंभ की। धीरे-धीरे एक अंतराल तक कठोर साधना करते हुए उन्होंने भगवती के आठ अनुष्ठान पूर्ण विधि-विधान से सम्पन्न किये। साधना करने का उनका मुख्य उद्देश्य भगवती के दर्शन प्राप्त करना था। परंतु आठ अनुष्ठान पूर्ण कर लेने के बाद भी उन्हें भगवती काली का साक्षात्कार नहीं हुआ। इससे वे गहन निराशा में डूब गये और आगे कोई अनुष्ठान सम्पन्न करने का विचार उन्होंने त्याग दिया। इस साधना-क्रम को निरंतर चलाने और कोई उपलब्धि प्राप्त न होने के कारण वे विचलित हो उठे और अपना साधना-स्थल छोड़कर कहीं अन्यत्र जाने का उन्होंने संकल्प कर लिया।

अपने इसी विचार के चलते उन्होंने साधना स्थल छोड़ दिया और बनारस पहुंच गये। स्टेशन से बाहर निकलने पर उन्होंने देखा कि एक मदारी तमाशा दिखा रहा है। उसके चारों ओर काफी भीड़ लगी थी। उस भीड़ में से कोई भी व्यक्ति फल-फूल आदि की इच्छा प्रकट करता और पलक झपकते ही वे मदारी महोदय अपना हाथ हवा में हिलाते और वांछित वस्तु उनके हाथ में प्रकट हो जाती।

रामशरण जी यह करतब देखकर हैरान रह गये। उन्होंने मन ही मन विचार किया कि एक ओर मैं हूं, जिसने साधना करते-करते एक लम्बी अवधि यूं ही व्यर्थ कर दी और कुछ भी प्राप्त न कर सका। दूसरी तरफ यह मदारी है कि जब जो इच्छा करता है, वही वस्तु प्राप्त हो जाती है। मुझसे अच्छा तो यही है।

ऐसा विचार करते-करते रामशरण जी का मन विचलित हो उठा। उनके मन में भी मदारी को गुरु बनाने और उससे यह विद्या जानने की इच्छा प्रबल हो उठी। अतः खेल समाप्त होने तथा भीड़ के चले जाने पर उन्होंने अपनी आकांक्षा उस मदारी के सामने व्यक्त की। पहले तो मदारी ने स्पष्ट इंकार कर दिया, परंतु उनके बार-बार आग्रह करने पर वह तैयार हो गया। उसने रामशरण जी को बताया कि उनको यह सिद्धि एक पखवाड़े में ही प्राप्त हो जायेगी। रामशरण जी उस मदारी के साथ उसके घर चले गये। अनुकूल समय देखकर उस मदारी ने उन्हें वह साधना बतायी, जिसे रामशरण जी ने ग्रहण करते हुए नियत अवधि के भीतर ही सिद्धि प्राप्त कर ली। अब रामशरण जी जब भी कोई वस्तु मंगाना चाहते, वही वस्तु उन्हें प्राप्त हो जाती। परंतु बाधा यह थी कि प्राप्त होने वाली का उपयोग वे स्वयं नहीं कर सकते थे। दूसरी बात यह थी कि अधिक मूल्य वाली वस्तु को पैसा (कीमत) देकर ही प्राप्त किया जा सकता था। यह प्रतिबन्ध ही उनकी इस सिद्धि के आनन्द को निर्मूल कर देता था।

रामशरण जी एक अच्छी श्रेणी के साधक थे। भगवती की साधना-उपासना किये उन्हें काफी समय बीत चुका था। इस प्राप्त सिद्धि का आकर्षण भी उनके लिए समाप्त हो गया था। वह मन ही मन पुनः अपने इष्ट देवता के प्रति आकर्षित होने लगे।

एक रात्रि में वे इसी असमंजस की स्थिति में थे। लेटे-लेटे उन्हें निन्द्रा आ गयी। उन्होंने स्वप्न में देखा कि भगवती काली उनके सामने खड़ी हैं, जिनसे वे अपने गिले-शिकवे कर रहे हैं। पहले तो वे सब कुछ सुनती रहीं। बाद में उनसे बोलीं कि तू यही जानना चाहता है ना कि मैं तेरे समक्ष प्रकट क्यों नहीं हुई? ले देख! इसका कारण तू स्वयं जान ले।

रामशरण जी ने देखा कि वे एक भयानक पठार में खड़े हुए हैं। वहां चारों ओर घने और ऊंचे-ऊंचे पत्थर उनके सामने खड़े हुए हैं। वे उस पार जाना चाहते हैं, परंतु उन ऊंची पहाड़ियों के कारण जा नहीं पा रहे हैं। अचानक उनके सामने से वे पहाड़ियां गायब होनी शुरू हो जाती हैं। एक के बाद एक, धीरे-धीरे, वे सभी पहाड़ी अदृश्य हो जाती हैं। अब वे एक रेगिस्तान में फंसे हुए हैं, जहां बहुत से कांटेदार पेड़ उगे हुए हैं। वे आगे बढ़ते हैं। धीरे-धीरे वे पेड़ भी गायब हो जाते हैं। तभी कुछ भयंकर और काले-राक्षस जैसे लोग उनकी ओर भयानक हथियार लेकर झपटते हैं, परंतु वे स्वतः ही लहुलुहान होकर गिर जाते हैं। तभी रामशरण जी अपने गन्तव्य की ओर बढ़ना चाहते हैं। अचानक वे देखते हैं कि एक दलदल वाली गहरी खाई उनके सामने है। वे इस पार खड़े हुए हैं। इस खाई के दूसरे किनारे पर एक महिला, जो बहुत ही तेजस्विनी है, अपने हाथ में रस्सी की सीढ़ी सी लिये खड़ी हुई है। वह बार-बार उस रस्सी की सीढ़ी को रामशरण जी की ओर फेंकती है ताकि वे उसे पकड़ सकें। परंतु वह सीढ़ी बार-बार उनके हाथ से छूट जाती है। लाख प्रयास करने पर वे उसे पकड़ नहीं पाते और बैठकर रोने लगते हैं। इसके साथ ही यह दृश्य समाप्त हो जाता है और पुनः भगवती काली उन्हें अपने समक्ष दिखायी देती हैं वे उनकी ओर प्रश्नवाचक दृष्टि से देखते हैं।

तब भगवती रामशरण जी को स्पष्ट करती है कि “वे पहाड़ और कांटों वाले वृक्ष तुम्हारे अशुभ कर्म थे, जो तुम्हारे जप के प्रभाव से मुझे काटने पड़े।

तुम्हारी साधना निरंतर चल रही थी और तुम मुझ तक पहुंचने ही वाले थे, परंतु मुझ तक पहुंचने में तुम्हारे कुछ अशुभ कर्म शेष थे, जो दलदल स्वरूप तुम्हारे और मेरे मध्य बाधा बने हुए थे। मेरे द्वारा फेंका जाने वाला रस्सी का पुल तुम इन्हीं अशुभ कर्मों के कारण पकड़ नहीं पा रहे थे। बस यदि यह अशुभ कर्म भी समाप्त हो जाता तो मैं तुम्हारे समक्ष प्रत्यक्ष हो जाती। परंतु तुम्हारा दुर्भाग्य यह रहा कि तुम विचलित हो गये। यदि तुम चाहते हो कि मेरी क्रोड़ (गोद) में आ जाओं तो एक अनुष्ठान और करो।" इतना कहकर भगवती अदृश्य हो गयी।

तभी रामशरण जी की आंखें खुल गयीं। उन्होंने उक्त स्वप्न पर गहन विचार किया और पुनः एक और पुरुचरण करने का संकल्प लिया। उचित समय देखकर उन्होंने एक और अनुष्ठान किया तथा भगवती का साक्षात्कार प्राप्त किया।

उक्त घटना को लिखने का मेरा यही मन्तव्य है कि कई बार सिद्धि प्राप्त न होते देखकर हम अपने लक्ष्य से भटक जाते हैं। हमारे आराध्य देव चाहते हैं कि पहले आप दोषमुक्त हो जायें तब उनकी गोद में जाने योग्य हो पायेंगे। इन्हीं दोषों का निस्तारण आपके द्वारा किये जाने वाले अनुष्ठानों से होता है। स्मरण रखें कि विधिपूर्वक किया जाने वाला आपका कोई भी मन्त्र-जप व्यर्थ नहीं जाता। वह पहले आपको अशुभ कर्मों के बन्धन से मुक्त करता है। दोष-परिहार हो जाने के बाद ही आपको आपके अभीष्ट की प्राप्ति हो पाना संभव है। यदि आप चाहते हैं कि आपके जप आपको पूर्ण फल प्रदान करें तो पहले इन दोषों का परिहार करने का स्वतः ही प्रयास करें। इन दोषों के कारण ही ग्रहों की अशुभ दशाएं भी आपको प्रभावित करती हैं। इसलिए शास्त्रों का यही निर्देश है कि सदैव शुभ कर्म करो। जो भी अच्छा कर्म करो, उसे उस परम-पिता का निर्देश जानकर, वह कर्म उन्हें ही अर्पित कर दो। फल देना

उसका काम है, आपका काम केवल सत्कर्म करना है। अपने अशुभ कर्मों के निस्तारण हेतु भूत-शुद्धि नियमित रूप से पूजा-उपासना से पूर्व अवश्य करें। यही भूत-शुद्धि आपको अशुभ कर्मों को नष्ट करने में सहायता प्रदान करती है। इसीलिए वाम-मार्ग में भूत-शुद्धि पर बहुत अधिक बल दिया जाता है। इस कर्म के प्रभाव से शरीरस्थ मलीन भूतों को भस्म करके नवीन दिव्य भूतों का निर्माण करना है।

नोट : जो लोग भूत-शुद्धि के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं वो हमारी हमारी पुस्तक. षट्कर्म विधान पढ़ें।

OUR BOOKS

Baglamukhi Sadhana Aur Siddhi Rs – 350/=

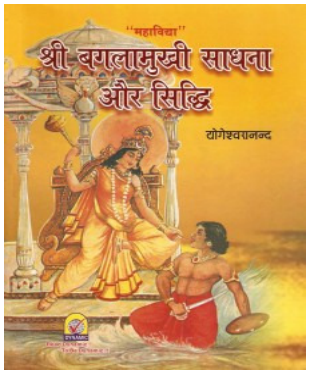

Sumit Girdharwal Ji & Sri Yogeshwaranand Ji
+91-9410030994, +91-9917325788 Email : shaktisadhna@yahoo.com
www.baglamukhi.info , www.yogeshwaranand.org

Mantra Sadhana Rs – 280/=

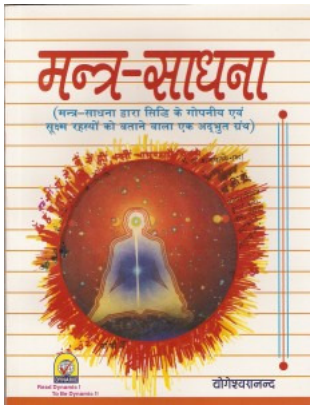

Shodashi Mahavidya (Tripurasundari Sadhana Sri Yantra Pooja) - Rs 370/=

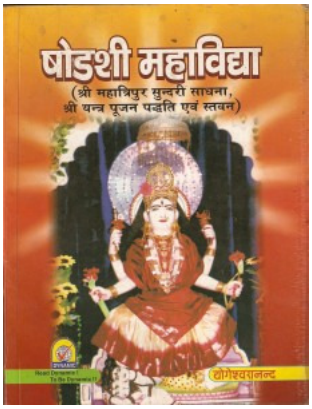

Shatkarma Vidhaan Rs – 380/=

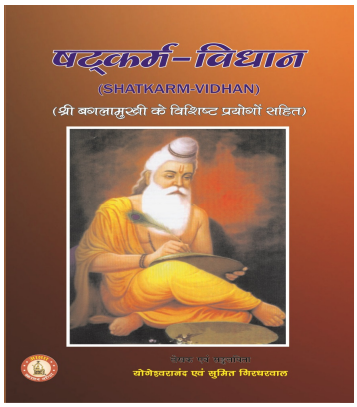

Sumit Girdharwal Ji & Sri Yogeshwaranand Ji
+91-9410030994, +91-9917325788 Email : shaktisadhna@yahoo.com
www.baglamukhi.info , www.yogeshwaranand.org

If you want to purchase any of our book then please deposit respective amount in below a/c –

Sumit Girdharwal

Axis Bank

912020029471298 (Current A/C)

IFSC Code – UTIB0001094

And send the receipt to our email sumitgirdharwal@yahoo.com or whatsapp +91-9410030994